घनाक्षरी नियमरत्नाकर

घनाक्षरीनियमरत्नाकर।

(अर्थात्)

घनाक्षरी छन्द की रचना के विषय में अत्यन्त उपयोगी नियमों का ग्रन्थ।

श्री १०८ गोस्वामि बालकृष्णलालजी महाराज काँकरौलीपुराधिपतिसंस्थापित काशी कविसमाज के सभ्यों तथा सर्वसाधारण के हितार्थ

श्रीयुत बाबू जगन्नाथदास (रत्नाकर) बी० ए० द्वारा लिखित।

जिसे

उक्त महाराज की आज्ञानुसार बाबू रामकृष्ण बर्म्मा ने मुद्रित किया।

RENARES.

BHARAT-JIWAN PRESS.

1897.

॥ श्रीहरिः ॥

भूमिका ।

जब मुझको प्रथम कवित्त बनाने का उत्साह हुआ तो मैंने उस छन्द का यथार्थ लक्षण ग्रन्थों में ढूंढ़ना आरम्भ किया और जहाँतक प्राप्त हो सके इकट्ठे किये परन्तु जब उन लक्षणों को सुकवियों के कवित्तों से मिला कर जाँचा तो उनको सर्वथा अपूर्ण पाया वरण कहीं कहीं उन लक्षणों में मेरी बुद्धि के अनुसार अयुक्तता भी प्रतीत हुई। जैसे इस लक्षण में—

दोहा ।

"आठ आठ पैं तीन जति बहुरि सात पैं एक ।
अन्त माहिँ नियमित गुरू कहि घनाक्षरी टेक" ॥

अब इस लक्षण से यदि इन कवित्तों
को मिलाइये:—

"बिनसैं विघनवृन्द द्वन्द पद वन्दतहीं मानि अरविन्द जे मलिन्द परसत हैं। ध्यावत जोगिन्द

गुन गावत कविन्द जासु पावत पराग अनुराग सरसत हैं ॥ भागैं दुरभाग अङ्गराग देखि दीन द्याल पूरन प्रताप पापपुञ्ज भरसत हैं । ज्यों हीं ज्यों पिनाकीतनैवक्रतुण्ड झांकी परै त्यों त्यों कविता की झुण्ड बाँकी दरसत हैं ॥"

"सूनो कै परमपद ऊनो कै बिरञ्चिमद न्यूनो कै नदीसनद इन्दिरा झुरै परी । महिमा मुनीसन की सम्पति दिगीसन की ईसन की सिद्धि ब्रजबीथि बिथुरै परी ॥ भादों की अँधेरी अधिराति मथुरा के पथ पाइ मनोरथ देव देवकी दुरै परी । पारावारपूरन अपार पारब्रह्म रासि जसुदा की कोर एक बारहिँ कुरै परी ॥"

"छत्रिन के छत्र छत्रधारिन के छत्रपति छाजत छटान छितिछेम के छवैया हौ। कहै पदमाकर प्रभाव के प्रभाकर दया के दरियाव हिन्दूहद्द के रखैया हो ॥ जागते जगतसिंह साहेब सवाई श्री प्रतापनृपनन्दकुलचन्द रघुरैया हौ । आछे

रहौ राजराजराजन के महाराज कच्छ-कुलकलस हमारे तो कन्हैया हौ ॥"

तो बिदित होता है कि पहिले कबित्त के पहिले तथा तीसरे चरण की तीसरी जतियां चौबीस पर नहीं पड़तीं, और दूसरे कबित्त के तीसरे तथा चौथे चरणों की पहिली जतियां आठ पर नहीं समाप्त होतीं । इसी प्रकार तीसरे कबित्त के दूसरे तथा तीसरे चरणों की दूसरी जतियां सोलह पर, और चौथे चरण की तीसरी जति चौबीस पर नहीं आतीं॥ इससे आठ आठ पर जति होने के नियम की अव्याप्ति स्पष्टही सिद्ध होती है। और यदि यह कहा जाय कि ये कबित्त ही अशुद्ध हैं, तो यह कहना सर्वथा असमंजस है क्योंकि प्रथम तो बहुधा उत्तमोत्तम कबियों के कबित्त ऐसेही प्राप्त होते हैं और दूसरे सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि इस नियम के भङ्ग होने से योग्य लोगों के कानों में भी, जो कि छन्दों के निमित्त श्रेष्टतम तुला माने जाते हैं,

कोई खटक नहीं होती इसके अतिरिक्त यह भी बात देखी गई कि उन नियमों के अनुसार होने पर भी कवित्त अशुद्ध रह सकते हैं ॥ *

जब कोई भी लक्षण ऐसा प्राप्त न हुआ कि जिसके अनुसार कवित्त बना देने पर यह साहसपूर्वक कहा जासके कि अब इसमें छन्द की अशुद्धि नहीं है तब मैंने निराश होकर यह निर्धार किया कि इन लक्षणों से केवल अक्षरों की गणना मात्र का नियम जाना जा सकता है; छन्द की गति के ठीक रखने में ये कुछ भी उपयोगी नहीं हैं; छन्द की गति का ठीक होना न होना केवल कबि के अनुभव पर निर्भर है। यह बिचार कर मैंने फिर उस ओर कुछ ध्यान न दिया और अपने अनुभव के अनुसार कवित्त

* जैसे यह तुक "चलत बीर तिहारो उपाय नेकहूं नाहि बिरहानल की ज्वाला कैसहूं नाहिँ बुझै ॥" इसमें आठ आठ पर जतियां भी हैं और अन्त में गुरु भी है पर तो भी इसको श्रवणतुला घनाक्षरी नहीं बतलाती ।

जोड़ता जाड़ता रहा। पर जब गोस्वामि श्री १०८ बालकृष्णलाल जी महाराज की कृपा से काशी-कविसमाज दृढ़ रूप से स्थापित हुआ और उसके सभासद लोग प्रति अधिवेशन में समस्यापूर्ति भेजने लगे तो बहुधा पूर्तियां ऐसी पाई जाने लगीं जो कि अक्षरों की गणना ठीक होने पर भी छन्दोभङ्गदूषण की उदाहरण हो सकती हैं। जब उन पर बिचार हुआ और मैंने उनको दूषित बतलाया तो मुझसे कहा गया कि अक्षर की गिनती तो इनमें ठीक है, अब इसपर भी यदि ये आप के लेखे दूषित हैं तो यह बतलाइये कि किस नियम के बिरुद्ध होने के कारण यह दूषित हुईं, और अब किस प्रकार ये सुधर सकती हैं। यह सुनकर जब मैंने बिचार किया तो स्थूल दृष्टि में ज्ञात हुआ कि अमुक स्थान पर अमुक गण पड़ने के कारण यह छन्द बिगड़ा, और मैंने बताना चाहा कि इस स्थान पर यह गण न आना चाहिये पर जब

फिर सूक्ष्म दृष्टि से देखा तो यह निश्चय हुआ कि उसी स्थान पर वही गण और और उत्तमोत्तम कवित्तों में पाये जाते हैं जो कदापि छन्दोभङ्ग नहीं कहे जा सकते; पर इसमें भी सन्देह नहीं कि इस विशेष कवित्त में यह गण इस स्थान पर छन्दोभङ्ग का कारण है। अब यह बात तो स्थिर हो गई कि किसी विशेष स्थान पर कोई विशेष गण छन्दोभङ्ग का कारण नहीं हो सकता, पर यह बात स्पष्ट रूप से ध्यान में न आई कि उस विशेष कवित्त में वह गण क्यों छन्दोभङ्ग का कारण हुआ। अतः कोई नियम स्थिर करके मैं न कह सका; केवल इतनाही कह कर चुप हो रहा कि छन्द की गति बिगड़ती है और विशेष इस समय मैं कुछ नहीं कह सका*।

* ऊपर लिखी कठिनाई को स्पष्टरूप से झलकाने के निमित्त कवित्त का एक चरण सव्याख्या उदाहरण रूप से लिखा जाता है। 'आयो मास फाग को विराग तजि राग भजि फाग शिव कैलाश पर मचावती है री।" इसकी उक्त

पर यह बासना मेरे चित्त में उसी समय आप से आप कोलाहल करने लगी कि यदि विशेष श्रम किया जाय तो कोई न कोई बात ऐसी हाथ आ सकती है कि जिसके द्वारा कवित्त का लक्षण यथार्थ रीति से निर्धारित हो सकता है।

यह विचार कर मैंने यह दृढ़ कर लिया कि घनाक्षरी के निमित्त कुछ नियम अवश्यही स्थिर होने चाहियें और बहुधा इस बात पर विचार भी करने लगा। एक दिन ईश्वर की कृपा से एक

राई में यही ज्ञात होता है कि जो गण चार अक्षर के पश्चात् पड़े हैं उन्हो से अर्थात् लघु गुरु के इस विशेष क्रम के कारण छन्दोभङ्ग होता है। पर यदि इस चरण को इससे मिलाइये:, "कैधों रूपराशि में सिंगाररस अङ्कुरित सङ्कुरित कैधों तम तड़िताजुन्हाई में।" तो जो गण उस तुक में हैं वही इसमें भी दिखाई देते हैं पर इसमें वे गण छन्दोभंग के कारण नहीं होते; अतः यह बात स्पष्ट सिद्ध होती है कि गण विशेष के स्थान विशेष पर आने से छन्द नहीं बिगड़ सकता। उदाहरण के चरण में छन्दोभंग का कारण कुछ औरही है जो कि प्रतीत नहीं होता।

बात ऐसी ध्यान में आई जिससे भली भाँति निश्चय हो गया कि यदि इस रीति पर चला जाय तो निस्सन्देह नियम स्थिर हो सकते हैं । फिर तो मैंने यथाशक्ति श्रम करना आरम्भ किया और सर्वशक्तिमान् जगदीश्वर की कृपा से कुछ नियम ऐसे स्थिर किये जिनसे सन्तोष प्राप्त हुआ ॥

इस समय एक दिन फिर उक्त श्री १०८ गोस्वामी बालकृष्णलालजी महाराज के सामने इस विषय की चर्चा चली, और बाबू रामकृष्ण वर्म्मा एडीटरभारतजीवन ने जो काशी कविसमाज के मन्त्री हैं इन नियमों की बहुत प्रशंसा की । उस पर उक्त महानुभाव ने आज्ञा दी कि इन नियमों को छपवाकर हमारे कविसमाज के सभासदों को भी बाँट देना चाहिये, जिसमें वे लोग भी इनका लाभ उठा सकें ।

यद्यपि मैंने कईएक कारणों से अपना नाम कविसमाज के सभासदों में से बिलग कर लिया है तथापि उनकी आज्ञा का पालन करना उ-

चित समझ कर और यह विचार कर कि यदि वास्तव में ये नियम उपकारी हों तो सर्वसाधारण भी इस परिश्रम का लाभ उठावें, इनको इस पुस्तिकाकार में प्रकाशित करता हूँ ॥

इन नियमों में अभी कुछ त्रुटियों के होने की सम्भावना हो सकती है, क्योंकि अभी ये पहिलेपहल सोचे गये हैं और इसके पूर्व नहीं प्राप्त हो सके थे; परन्तु आशा है कि यदि कवित्त के प्रेमी सज्जन लोग इनमें त्रुटियां निकालकर मुझे सूचित करेंगे तो इनका सुधार भलीभाँति हो जायगा ।

शिवालयघाट, बनारस ।
भाद्रपद, शुक्ल ऋषिपञ्चमी
सम्वत् १९५४ ।

जगन्नाथदास
(रत्नाकर)

॥ श्रीहरिः॥

घनाक्षरीनियमरत्नाकर।

वास्तव में तो सभी छन्दों की कवित्त संज्ञा है परन्तु आजकल्ह लोकव्यवहार में यह शब्द एक विशेष छन्द का वाचक हो गया है जिस्का नाम ग्रन्थों में घनाक्षरी तथा दण्डक मिलता है। परन्तु २६ वर्णों से अधिकवर्णों के छन्दों को सामान्यतः भी दण्डक कहते हैं अतः घनाक्षरी और कवित्त ये दो संज्ञा इस ग्रन्थ में प्रयुक्त होंगी। देव कवि ने "काव्यरसायन" नामक ग्रन्थ में इसको 'अनियतदण्डक' और 'घनाक्षरी' के नाम से लिखा है।

देव कवि ने अनियतदण्डक चार प्रकार के अर्थात् ३० अक्षर से लेकर ३३ अक्षर तक के माने हैं। उनके उदाहरण नीचे लिखे जाते हैं।

तीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"जैजै ब्रजदूलह दुलारे जसुदा के सुत महाराज मोहन मदन मदहारी। आनँदअखण्डरासमण्डलविलास भुवमण्डल के आखण्डल देव हितकारी॥ बंसीधर श्रीधर गुपाल बनमालधर राधावर गोपवर गिरवरधारी। वृन्दाबनचन्द नन्दनन्दन गोविन्द स्यामसुन्दर कुँवर कुञ्जमन्दिरविहारी॥"

एकतीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"प्रानद दिगीसनि के मानद मुनीसनि के ईसनि के आनँद महानद अनीध के। भुवन अनेक राजराजन के एक राज तारिबे के काज जे जहाज भौ-पयोध के॥ शूलउरअसुरनि फूल सुररूषनि के निरमल मूल जे निपुन पुन्य पौध के। देव मारतण्डकुलमण्डन अखण्ड महिमण्डल के मारतण्ड आखण्डल औध के॥"

बत्तीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"ऋषिमखराखन अपै धनुष सायकनि घायक

असुर सुरनायक सुभं-करन। तारन अहिल्या उर सिल्या अरि सूरन के तोरनपिनाक भृगुपति निरहंकरन॥ बन्धनपयोधि दसकन्धरिपु दीन-बन्धु अधम-उधारन भयङ्करभयङ्करन। पावक के अङ्क सोधि सिय निकलङ्क आये लङ्क रन जीति रविकुल के अलङ्करन॥"

तेंतीस अक्षर का अनियतदण्डक।

"इभ से भिरत चहुँघाई तें घिरत घन आवत झिरत झीनी झर सों झपकि झपकि। सोरन मचावैं नाचैं मोरन की पाँतैं चहूँ ओरन तैं चौंधि जाति चपला लपकि लपकि॥ बिना प्रान प्यारे प्रान न्यारे होत देव कहै नैन अस आनि रहै अँसुवा टपकि टपकि। रतिया अँधेरी धीर न तिया धरति मुख बतिया कढत उठै छतिया तपकि तपकि॥"

और ग्रन्थों में केवल दो प्रकार के घनाक्षरी छन्द, अर्थात्, इकतीस और बत्तीस अक्षर के मि-

लते हैं और उन्हीं का प्रचार विशेष है। किसी किसी अपर कवि ने भी तेंतीस वर्ण के कवित्त बनाये हैं परन्तु बहुतही कम—

जसवन्तसिंह का बनाया हुआ तेंतीस अक्षर का कवित्त।

"झिल्ली झनकारैं पिक चातक पुकारैं बन मोरनि गुहारैं उठैं जुगुनू चमकि चमकि। घोर घनकारे भारे धुरवा धुरारे धाम धूमनि मचावैं नाचैं दामिनी दमकि दमकि॥ झूकनि बयार बहै लूकनि लगावै अंग हूकनि भभूकनि की उर मैं खमकि खमकि। कैसें करि राखों प्रान प्यारे जसवन्त बिना नान्ही नान्ही बूँद झरै मेघवा झमकि झमकि॥"

इकतीस अक्षरवाला कवित्त मनहरन और बत्तीस वाला रूप घनाक्षरी कहलाता है। घनाक्षरी छन्द में लघु गुरु का किसी विशेष क्रम से पड़ने का नियम नहीं है, इसी कारण से ये मुक्तक तथा अनियत कहे जाते हैं॥

इकतीस अक्षरवाले घनाक्षरी छन्द के अन्त में एक गुरु नियम से रक्खा जाता है—

उदाहरण।

"बैठी सीसमन्दिर मैं सुन्दरि सिँगारि तन मूँदि कै किवार देव छबि सौं छकति है। पीतपट लकुट मुकुट बनमाल धरैं बेष कै पिया को प्रतिबिम्ब मैं तकति है॥ होति है उसङ्ग हियें अङ्क भरि भेंटिबे कौं भुजनि पसारति समेटति जकति है। चौंकति चकति उझकति झझकति झुकि भूमि लचकति मुख चूमि ना सकति है॥"

"सरदनिसा के निसनाथ की उँजेरी जोहि रम्यो जाके सङ्ग मैं अनङ्गरस पैबे कौं। थिरत न केहूँ कहूँ फिरत फिस्यो है फेर बन बन व्याकुल बिखाद बिसरैबे कौं॥ गरब न कीजै एरे किन्सुक प्रसून तोपैं बैठ्यो नाहिं भँवर सुगन्धरस लैबे कौं। मालती के बिरह बिकल कलकान ह्वै कै आयो तोहिँ जानि कै दवागि जरि जैबे कौं॥"

और बत्तीस अक्षरवाले के अन्त में लघु का नियम लोगों ने कहा है और बहुधा बत्तीस अक्षर के कवित्त इसी प्रकार के होते भी हैं:—

उदाहरण ।

"बीतिहै न मास नैन आनति हौ कत आँस यों कहि सवास प्यारे पोंछ्यो मुख निज कर । आँगन लौं आओ नीके मङ्गल मनाओ कछू दुख जनि पाओ हम आइहैं जु हरबर ॥ फरकौहें अधर नचौहें नाकमोती भये उतर न आयो भरि आयो गद्दबर गर । एते पर आलिन रसाल के मँगाइ धरे सुललित मौरन के पल्लव कलस पर ॥"

"कीजियत प्यारे आज तेरे पर तेरी सौहँ तन मन धन दीजियत तोपैं वार वार । कहै पद्‌-माकर कहत मृगनैनी के यों नैन भरि आये बिन गुन के निहार हार ॥ आँखिन तें आँसू ढरि परे जे कपोलनि कपोलनि तें परे ते उरोजनि

पैं बारबार। बड़े बड़े मोती मीन देत रजनीसैं रजनीस मनो देत सम्भु-सीस पर ढार ढार॥"

परन्तु कितने बत्तीस वर्णात्मक कवित्त ऐसे भी होते हैं जिनके अन्त में गुरु होता है और वह कानों को अप्रिय भी नहीं ज्ञात होते, अतः मेरी समझ में रूप घनाक्षरी के अन्त में गुरु का नियम करदेना उचित नहीं है:—

उदाहरण।

"चालै क्यों न चन्दमुखी चित मैं सुचैन करि तित बन बागन घनेरे अलि घूमि रहे। कहै पद्माकर मयूर मञ्जु नाचत हैं चाय सों चकोरिनि चकोर चूमि चूमि रहे॥ कदम अनार आम अगर असोक थोक लतनि समेत लोने लोने लगि भूमि रहे। फूलि रहे फलि रहे फैलि रहे फबि रहे झपि रहे झालि रहे झुकि रहे झूमि रहे॥"

"बैठी बनि बानिक सों मानिकमहल मध्य

अङ्ग अलबेली के अचानक थरकि परे । कहै पद्माकर तहाँई तनतापन तें बारन तें मुकता हजारन ढरकि परे ॥ बाल छतियाँ तें थकथक ना कढ़त मुख बकना कढ़त कर ककना सरकि परे। पाँसुरी पकरि रही साँसु री सँभारै कौन बाँसुरी बजत आँख आँसु री ढरकि परे॥ *

देव कवि ने जो तीस तथा तेंतीस अक्षर के दो छन्द घनाक्षरी भेद में लिखे हैं वह और कवियों के काव्य में विशेष देखने में नहीं आते और कानों में भी वह विशेष रोचक नहीं ज्ञात होते। उनके विषय में कुछ पृथक् कहने की आवश्यकता नहीं जान पड़ती। जो नियम कि इकतीस तथा बत्तीस वर्णों के छन्द के विषय में कहे जायँगे वही तीस और तेंतीस अक्षरों के कवित्त में भी काम देंगे। इतना यहाँ कह देना

* इस बात पर ध्यान रखना चाहिये कि यदि रूप घनाक्षरी के अन्त में गुरु हो तो उस गुरु के पहिले दो लघु कानों को सुखद होते हैं ॥

तीन जतियाँ आठ आठ पर मानी हैं परन्तु इस नियम का असम्यक् होना हम भूमिका में दिखला चुके हैं॥ सोलह पर जति होने के नियम को भी बहुधा सुकवियों ने अपने कवित्तों में भङ्ग कर डाला है और उनका वह नियम तोड़ना छन्द के अपकारी होने के स्थान पर किसी किसी कवित्त में उसके विषयानुकूल होने के कारण उपकारी हो गया है:—

उदाहरण।

"सखिन-सकोच गुरु-सोच मृगलोचनि रिसानी पिय सों जो उन नेकु हँसि छियो गात। मृदु मुसिक्याइ वे सहजि उठि गये इन सिसकि सिसकि रात खोई पायो परभात॥ कौन जानै वीर बिन बिरही बिरहबिथा हाय हाय करै पछिताति न कछू सुहात। बड़ी बड़ी आँखिन तें आँसू ढरि ढरि देव गोरो गोरो भोरो मुख ओरे लों बिलानो जात॥"

"बाजीखुरधारनि पहार करै छार गढ़ गरद मिलावै जोर जङ्गनि जकत है। ल्यावै आसमान तें पताल तें पकरि पारावार तें कढ़ावै थाह लेत ना थकत है॥ सङ्ग न करत लङ्कपति सों जुरत जङ्ग जीहि कै जमात जम छोभनि छकत है। कालतें कराल या अलाउद्दीन पातसाह ताको चोर चारोंओर राखि को सकत है॥"

पहिले कवित्त के पहिले चरण के सोलह पर जति नहीं पड़ी है; और दूसरे कवित्त के दूसरे चरण में भी वही दशा है, परन्तु सुनने में कोई दोष नहीं जान पड़ता, बरन दूसरे कवित्त में पूर्वार्द्ध के दो अक्षरों के उत्तरार्द्ध में मिल जाने के कारण कुछ विशेष गौरव तथा वक्ता की उद्विग्नता प्रतीत होती है जो कि विषय की उपयोगी है। अब निर्धारित होता है कि सोलह पर भी जति का होना एक साधारण नियम है अत्यन्त आवश्यक नहीं॥

जो बातें ऊपर कही गई हैं उनसे घनाक्षरी के अक्षरों की संख्या मात्र ज्ञात होती है और एक बात यह विदित होती है कि मनहरण घनाक्षरी का अन्त वर्ण गुरु होना चाहिये ।

दोहा ।

इकतिस बत्तिस वर्ण को
हैं घनाक्षरी छन्द ।
प्रथम कहावत मनहरण
द्वितिय रूप सुखकन्द ॥
सोलह पैं जति कीजिये
बहुधा करिकै प्रेम ।
अन्त माहिं मनहरण के
गुरु राखौ करि नेम ॥

पर इस नियम से यह कुछ भी नहीं विदित होता कि वह इकतीस अथवा बत्तीस अक्षर किस प्रकार से गुरु लघु के क्रमानुसार रक्खे जाने चाहियें और इसका कोई नियम घनाक्षरी

में हो भी नहीं सकता। उपोद्घात में हम दिखला चुके हैं कि किसी विशेष गण के किसी विशेष स्थान पर पड़ने के कारण घनाक्षरी छन्द की सुढरता कुढरता नहीं होती वरन उसका दूसराही कारण है॥

घनाक्षरी छन्द की सुढरता कुढरता जिन शब्दों को जोड़कर वह छन्द बनता है उन शब्दों के वर्णों की परिगणना तथा उन शब्दों के वर्णों के लघु गुरु के क्रम पर निर्भर है जो कि बड़ी ही सूक्ष्म बात है। वही गण उसी स्थान पर एक प्रकार के शब्द रखने से छन्दोभङ्ग का कारण हो जाता है, और वही गण उसी स्थान पर दूसरे शब्द रख देने से सर्वथा उत्तम ज्ञात होता है। अब वह नियम लिखे जाते हैं जिनके अनुसार घनाक्षरी में शब्द बैठाने चाहियें॥

नियमों के लिखने के पहिले कुछ आवश्यक बातें लिख दी जाती हैं, जो कि नियमों के भली भाँति समझने के निमित्त आवश्यक हैं। पाठक लोग इन पर ध्यान रक्खें।

(१) कह्यो न कछु जेहि विषय में
तेहिँ अनियत जिय जानि।

अर्थ—जिस विषय में कुछ न कहा हो उसको अनियत समझो। जैसे तीन वर्णों के पश्चात् यदि एक अक्षर का एक शब्द पड़े तो उसके विषय में कुछ नहीं कहा है तो उसमें यह समझना चाहिये कि लघु गुरु का कुछ नियम नहीं है चाहे वह शब्द लघुआत्मक हो, जैसे, न, और चाहे गुरु आत्मक, जैसे, है, को इत्यादि॥

(२) कही जु संख्या नियम में अक्षर संख्या मानि॥

अर्थ—नियमों में जो संख्याएँ कही हैं उनसे अक्षरों की संख्याएँ समझनी चाहियें—जैसे नियमों में जो चार, तीन पाँच इत्यादि संख्याएँ कही गई हैं उनसे चार, तीन, पाँच इत्यादि वर्ण समझने चाहियें॥

(३) काहू संख्या पैं कोऊ कह्यो नियम जो होइ।
ताके उत्तर पूरबहु चारि चारि तजि सोइ॥

अर्थ—जब किसी संख्या विशेष के विषय में कोई नियम कहा जाय तो उस संख्या के चार चार वर्ण पश्चात् जो संख्याएँ हों तथा चार चार वर्ण पहिले जो संख्याएँ हों उनके विषय में भी वही नियम समझना चाहिये। जैसे यदि

यह कहा हो कि नौ अक्षरों के पश्चात् अमुक प्रकार से शब्द आवें तो यह समझना चाहिये कि एक, पाँच, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस तथा उन्तीस अक्षरों के पश्चात् भी उसी प्रकार से शब्द आने चाहियें॥

(४) गण त्रै-वर्णसमूह कों कहत सबै मतिमान।
आठ रूप प्रस्तार सों तिनके होत सुजान॥
मगण, यगण, औ रगण, पुनि
सगण, तगण, जिय जानि।
जगण, भगण, औ नगण, ये
क्रम सों नामहिं मानि॥

अर्थ—तीन वर्णों के समूह को गण कहते हैं। तीन वर्ण के प्रस्तार करने से आठ रूप होते हैं। ये आठों रूप आठ गण कहलाते हैं क्रम से उनके नाम दोहे में दिये गये हैं॥

SSS	मगण	SSI	तगण
ISS	यगण	ISI	जगण
SIS	रगण	SII	भगण
IIS	सगण	III	नगण

अथ नियम ।

प्रथम नियम ।

चरण आदि औ चार पर
धरो शब्द सो नाहिं ।
ज, त, जाके आरम्भ में,
म, य, हू मध्यम आहिं ॥

अर्थ—कवित्त के चरण के आदि में और चार, आठ, बारह, सोलह, बीस, चौबीस तथा अट्ठाइस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आरम्भ हो तो उसके आदि में जगण (। ऽ ।) तथा तगण (ऽ ऽ ।) न पड़ने पावें। और ऐसे शब्द के आरम्भ में यगण (। ऽ ऽ) और मगण (ऽ ऽ ऽ) के आने से भी मध्यम श्रेणी की गति हो जाती है ॥ *

* यह स्मरण रखना चाहिये कि तीन अक्षरों से न्यून के शब्द में यह नियम नहीं लग सकता क्योंकि उसमें म-गणादि की सम्भावनाही नहीं है। सम्भावना का यथोचित विचार और नियमों में भी कर लेना चाहिये ॥ यह भी ध्यान रखना चाहिये कि यह नियम उसी अवसर के निमित्त है जहां एकही शब्द में उक्त गण पड़ें। पर जहां शब्दों के तोड़ जोड़ में पड़ें वहां यह नियम नहीं है। यही बात यथा सम्भव और नियमों में भी है।

उदाहरण।

(आरम्भ में जगणादि शब्द दूषित)

निकुञ्ज विलोकि बर बृन्दावन कानन कै
लाजै बन नन्दन यों सोभा सरसति है।

इसमें आरम्भ में 'निकुञ्ज' शब्द जगण (। ऽ ।) का है जिससे गति बिगड़ जाती है॥

(चार अक्षरों के पश्चात् जगणादि शब्द दूषित)

दूरही सों कलिन्दसुता रश्मि बीचिनि सों
भीनी स्याम रङ्ग में सुखद दरसति है॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'कलिन्दसुता' शब्द के जगणादि (। ऽ ।) होने के कारण गति बिगड़ती है॥

(आरम्भ में तगणादि शब्द दूषित)

आकाश में लसति सुहाई मनभाई घटा
छहरि छहरि बूँद झीनी बरसति है।

इसमें आरम्भ में 'आकाश' शब्द तगण (ऽ ऽ ।) का है जिसके कारण गति बिगड़ती है॥

(चार अक्षरों के पश्चात् तगणादि शब्द दूषित)

ऐसे समै सारङ्गधर पैं क्यों न चलै बीर बैठी
कहा मन मैं मसूसि तरसति है॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'शारङ्गधर' शब्द तगणादि (ऽऽ।) है अतः गति बिगड़ी है॥

(आरम्भ में मगणादि शब्द मध्यम)

आकांक्षी तिहारे दरसन को भयो हौं हौं तो
टारि पट घूँघट को दरस दिखाइ दै।

इसमें आरम्भ में 'आकांक्षी' शब्द मगण (ऽऽऽ) का पड़कर गति को मध्यम करता है॥

(चार वर्णों के पश्चात् मगणादि शब्द मध्यम)

केसन में तातारी मृगम्मद सुगन्ध लसै
लट छटकाइ नेकु सो अब सुँघाइ दै॥

इसमें चार अक्षर के पश्चात् 'तातारी' शब्द मगण (ऽऽऽ) का है अतः गति मध्यम हो गई है॥

(आरम्भ में यगणादि शब्द मध्यम)

निकाई तिहारी परवारी जातिँ रम्भा रमा
रञ्चक दया सों हियें सुख सरसाइ दै।

इसमें आरम्भ में 'निकाई' शब्द यगण (।ऽऽ) का होने के कारण गति को मध्यम श्रेणी को करदेता है॥

(चार वर्णों पर यगणादि शब्द मध्यम)

जोमभरी जवानी जुलम कियें डारति है
जोबन की कछुक जकात करि चाइ दै॥

इसमें चार अक्षरों के पश्चात् 'जवानी' शब्द यगण (। ऽ ऽ) का है अतः गति मध्यम हो जाती है ॥

इसी प्रकार से आठ बारह इत्यादि वर्णों के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

प्रथम नियम का प्रतिप्रसव।

चार वर्ण को शब्द इक
तहँ यह नियम न जानि।
पै केवल गुरुअन्त में
मध्यम गति मन मानि ॥

अर्थ—यदि आरम्भ में या चार आठ इत्यादि वर्णों के पश्चात् ऐसा शब्द आवे कि जो चार अक्षर का पूरा एक शब्द हो तो जगण, तगण, मगण तथा यगण के आरम्भ में पड़ने के विषय में जो बातें प्रथम नियम में कही गई हैं उसमें न माननी चाहियें। परन्तु यदि उसके अन्त का वर्ण गुरु हो तो गति मध्यम हो जाती है ॥

इसमें आरम्भ में 'समाधानी' यगणादि शब्द यद्यपि चार अक्षरों का पूरा है तथापि गुर्वन्त होने के कारण मध्यम है ॥

इसी प्रकार से चार, आठ इत्यादि अक्षरों के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

दूसरा नियम ।

पाँच वर्ण पर शब्द जो
पूरन, तामें आनि ।
लघु गुरु दीजै अन्त में,
गुरु गुरु मध्यम मानि ॥

अर्थ—यदि कोई शब्द पांच, नव, तेरह, सत्तरह, इक्कीस, पच्चीस अथवा उन्तीस अक्षर पर समाप्त हो तो उस शब्द के अन्त में लघु गुरु (। ऽ) पड़ना चाहिये और यदि गुरु गुरु (ऽ ऽ) अर्थात् दो गुरु उसके अन्त में पड़ें तो यद्यपि उसकी गति सर्वथा तो नहीं नष्ट होती तथापि मध्यम श्रेणी की अवश्य हो जाती है ॥

उदाहरण।

(निर्दोष)

"सिन्धु को सपूत सुत
सिन्धुतनया को बन्धु इत्यादि।"

इसमें 'तनया' शब्द तेरह अक्षरों पर समाप्त होता है और उसके अन्त में लघु गुरु (। ऽ) है॥

(मध्यम)

आज सुदामा के खाइ
तन्दुल अघाने इमि इत्यादि।

इसमें 'सुदामा' शब्द पांच वर्ण पर समाप्त हुआ है और उसके अन्त में दो गुरु हैं अतः गति मध्यम हो गई है॥

(दूषित)

निरखि श्याम सुघर धीरज धरै न मन इत्यादि।
निरखि मृदु निकाई धीरज धरै न मन इत्यादि।

इनमें 'श्याम' तथा 'मृदु' शब्द पांच पांच पर समाप्त हुए हैं परन्तु उनके अन्त में लघु गुरु (। ऽ) अथवा दो गुरु (ऽ ऽ) नहीं हैं अतः गति बिगड़ गई है॥

इसी प्रकार से नौ, तेरह, सत्रह इत्यादि अक्षरों पर समाप्त होनेवाले शब्दों के विषय में समझ लेना चाहिये॥

तीसरा नियम ।

पाँच वर्ण पर शब्द जो
एक वर्ण को नाहिं ।
तो लघु सों आरम्भियै
करि बिचार मन माहिं ॥

अर्थ—पांच, नौ, तेरह, सत्रह, इक्कीस, पच्चीस, तथा उन्तीस वर्णों के पश्चात् जो शब्द आवे वह यदि एकही वर्ण का हो तो चाहे लघु हो चाहे गुरु परन्तु यदि एक अक्षर से अधिक का हो तो उसके आदि में लघु होना चाहिये ॥

उदाहरण ।

(निर्दोष)

"गोरस को लूटिबो न छूटिबो छरा को गनै टूटिबो गनै न मुकताहल की माल को । कहै पद्माकर गुवालिनि गुनीली हेरि हरषै हँसै यों करै झूठे झूठे ख्याल को ॥ हाँ करति ना करति नेह कीनसा करति साँकरी गली मैं रङ्ग राखति

रसाल को । दीबो दधिदान को सु कैसें मन भावै ताहि जाकि मन भायो भार भगरो गुपाल को ॥"

इस कवित्त में पहिले पद में तेरह अक्षरों पर 'को' शब्द दूसरे चरण में इक्कीस अक्षरों पर 'यों' शब्द तथा तीसरे तुक में इक्कीस अक्षरों पर 'मैं' शब्द गुरु रूप से आये हैं; और पहिले चरण में 'न' शब्द इक्कीस अक्षरों पर लघु आया है। तीसरे चरण में एक, पांच, तथा तेरह अक्षरों के पश्चात् एक अक्षर से अधिक का 'करति' शब्द लघु से आरम्भ होता है ॥

(दूषित)

मेघ बरसै वीर बड़ी बड़ी हैं बूँद लखो इत्यादि।

इसमें 'वीर' शब्द पांच वर्णों के पश्चात् गुरु से आरम्भ होता है अतः गति दूषित हो जाती है ॥

इसी प्रकार से नौ, तेरह इत्यादि के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

चौथा नियम ।

दोय वर्ण पश्चात जो
परै शब्द कोउ आनि ।
ज, त, म, य, ताके आदि में
मध्यम गति जिय जानि ॥

अर्थ—दो, छः, दस, चौदह, अट्ठारह, बाइस, तथा छब्बीस वर्णों के पश्चात् यदि कोई शब्द आवे तो उसके आदि में जगण (। ऽ ।), तगण (ऽ ऽ ।), मगण (ऽ ऽ ऽ), तथा यगण (। ऽ ऽ) मध्यम गति के होते हैं ॥

उदाहरण ।

(दो अक्षर पर जगणादि शब्द मध्यम)

देखि निकुञ्जन की अनूप सुखमा को रूप
हिय में हुलास बाढ्यो कहत बनै नहीं ।

इसमें दो अक्षर के पश्चात् 'निकुञ्जन' शब्द जगणादि (। ऽ ।) होने के कारण मध्यम है ॥

(दो अक्षर के पश्चात् तगणादि शब्द मध्यम)

घेरि आकासहिँ राख्यो सरस घनेरी घटा
चपला चमंकैं चख चहत बनै नहीं ॥

इसमें दो अक्षरों के पश्चात् 'आकासहिँ' शब्द तगणादि (ऽ ऽ ।) होने के कारण मध्यम है ॥

(दो अक्षरों पर मगणादि शब्द मध्यम)

गञ्जैं सारङ्गीनि मञ्जु गुञ्जैं यों भँवर भौर
केकी सहनाई सुर रञ्जक गनै नहीं ।

इसमें दो अक्षर के पश्चात् 'सारङ्गीनि' शब्द मगणादि (ऽ ऽ ऽ) होने के कारण मध्यम है ॥

(दो अक्षरों के पश्चात् यगणादि शब्द मध्यम)

ऐसी निकाईहिँ लखि मान तजि एरी बीर
जोगी जनहूँ सों सुनि धीरज ठनै नहीं ।

इसमें दो अक्षरों के पश्चात् 'निकाईहिँ' शब्द यगणादि (। ऽ ऽ) होने के कारण मध्यम है ॥

इसी प्रकार छः, दस, इत्यादि के पश्चात् समझ लेना चाहिये ॥

पाँचवाँ नियम।

तीन वर्ण पर शब्द जो ताके लघु गुरु आदि।

अर्थ—तीन, सात, ग्यारह, पन्द्रह, उन्नीस, तेइस तथा सत्ताइस अक्षरों के पश्चात् जो शब्द आवे और एक अक्षर से अधिक का हो तो उसके आरम्भ में लघु गुरु (। ऽ) का होना आवश्यक है। पर यदि एकही अक्षर का शब्द हो तो उसके लिये कुछ नियम नहीं है॥

उदाहरण।

(निर्दोष)

"सोभा कों सकेलि ऊँची बेलि बाँधी बलि-भद्र राख्यो सम लोचन कुरङ्गनि को रोस है। दीपति को दीपक कै मुख दीप को सुमेरु मृदु मुख सारस को सिफाकन्द जोस है॥ कलप-तरोवर की कली कैधों कुन्द फली उपमा अनूपनि को बिविध निसोस है। तिल को सुमन है कि नासिका तरुनि तेरी मुख की सरन कैधों सौरभ को कोस है॥"

इसमें प्रथम चरण में तीन अक्षर के पश्चात् 'सकेलि' शब्द और तेइस अक्षर के पश्चात् 'कुरङ्ग' शब्द. और तीसरे चरण में तीन अक्षर के पश्चात् 'तरोवर' शब्द, उन्नीस अक्षर के पश्चात् 'अनूपनि' शब्द, और सत्ताइस अक्षर के पश्चात् 'निसोस' शब्द लघु गुरु (। ऽ) से आरम्भ होते हैं ॥

दूसरे चरण में तीन अक्षर पर 'कों' शब्द, सात अक्षर पर 'कैं' शब्द तथा तेइस अक्षर पर 'को' शब्द गुरु पड़े हैं; और चौथे चरण में सात अक्षर पर 'कि' शब्द लघु है। एक अक्षर के होने के कारण दोनों रूप निर्दोष हैं ॥

इसी प्रकार और स्थानों पर भी समझ लेना चाहिये ॥

(दूषित)

सरस वन लसत नाचत मयूरगन इत्यादि।

सरस कुञ्जनि लखि नाचत मयूरगन इत्यादि।

सरस आकाश लसै नाचत मयूरगन इत्यादि।

इनमें तीन अक्षरों के पश्चात् 'वन' 'कुञ्ज' तथा 'आकाश' शब्द लघु गुरु (। ऽ) से नहीं आरम्भ होते अतः गति बिगड़ जाती है ॥

इसी प्रकार से और स्थानों पर भी समझ लेना चाहिये ॥

पाँचवें नियम का प्रतिप्रसव।

होइ नगण को शब्द तो

जात नहीं सो बादि।

अर्थ—यदि तीन अक्षर के पश्चात् नगण (।।।) का पूरा एक शब्द आवे तो उसको छोड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है, अर्थात् यद्यपि उसके आरम्भ में लघु गुरु (। ऽ) नहीं होता तथापि उसका रखना निर्दोष है॥

जैसे, 'सोभा को सकेलि' आदि, ऊपर के कवित्त के चौथे
... अक्षर के पश्चात् 'सुमन' शब्द तथा ग्यारह
चरण में ... 'रुनि' शब्द तीन लघु के पूरे शब्द होने
अक्षर के पश्चात् 'त...
के कारण निर्दोष हैं॥

इसी प्रकार और स्थानों पर समझ लेना चाहिये॥

ये नियम जो ऊपर लिखे गये हैं उनके विषय में यद्यपि यह कहना कदाचित् अनुचि[त] साहस समझा जाय कि ये पूर्णतः सम्यक् औ[र]

असाध्य हैं तथापि इतना कहना विशेष विवाद का कारण न माना जायगा कि यदि इन नियमों पर भलीभांति ध्यान रखकर उत्तम कवित्त बनाया जाय तो आशा है कि उसकी गति में खटक न प्रतीत होगी ॥

इसमें सन्देह नहीं कि किसी किसी उत्तमोत्तम कवि के कोई कोई कवित्त ऐसे प्राप्त होते हैं जिनके अक्षर इन नियमों के विरुद्ध पड़े हैं, परन्तु कानों में उनकी गति खटकती अवश्य है; अतः इन नियमों को भंग करके उनका अनुकरण करना उचित नहीं है, वरन उनको आर्षवत् समझकर चुप हो रहना चाहिये ॥

उदाहरण।

"पामरिनि पाँवड़े परे हैं पुरपौरि लगि धाम धाम धूपनि के धूम धुनियतु है। कस्तूरी अतरसार चोवारस घनसार दीपक हजारनि अँध्यार लुनियतु है॥ मधुर मृदङ्ग राग रङ्ग की तरङ्गनि

में अङ्ग अङ्ग गोपिन के गुन गुनियतु है । देव सुख साजि महाराज ब्रजराज आज राधे जू के सदन सिधारें सुनियतु है ॥"

इस कवित्त के दूसरे चरण के आरम्भ में 'कस्तूरी' शब्द मगनात्मक होने के कारण प्रथम नियम के अनुसार मध्यम गति का कारण होता है ॥

पुनः ।

"प्रथम सिँगार नौहू रसनि को सार जाको नायिका अधार सो जो नायक के सङ्ग है । सं जोग, बियोग सो सिँगाररस है विध, वियोग चारि बिध, अरु संजोग इकङ्ग है ॥ पूरवानुराग, मान, प्रबास, करुन, मिल्यो चौबिध वियोग, दस दसनि के रङ्ग है । हाव, भाव भोग, उपभोग, सबिलास, हास, बिबिध सँजोग सुखसागरतरङ्ग है ॥

इस कवित्त के दूसरे पाद के आरंभ में तथा चौबीस वर्णों के पश्चात् 'संजोग' शब्द तगणात्मक (ऽ ऽ ।) होने के कारण, और तीसरे पाद में आठ वर्णों के पश्चात् 'प्रबास' शब्द जगणात्मक (। ऽ ।) होने के कारण, प्रथम नियमानुसार, गति को बिगाड़ देते हैं ॥

पुनः।

"त्रिभुवनभागु बरसतु बरसाने दरसतु रङ्ग रागु सरसतु है सुहागु सुनि । इन्द्र जम बरुन कुबेर सेस बासरेस वारिये सुमेर कैलासहू की चमक चुनि ॥ संकेत निकेत सुख देत हरि हेत करि राधिका समेत मृदु मंगल मृदंग धुनि । चमकैं चहूँधा मनि मोती कनकादि गुन गाहैं गनकादिक सराहैं सनकादि मुनि ॥"

इस कवित्त के तीसरे पाद के आरंभ में 'संकेत' शब्द तगणात्मक होने के कारण प्रथम नियम के विरुद्ध है। दूसरे चरण के छब्बीस वर्णों के पश्चात् 'कैलास' शब्द तगणात्मक होने के कारण चौथे नियमानुसार गति को मध्यम कर देता है ॥

यह बात यहां ध्यान देने के योग्य है कि ऊपर लिखे हुए नियमों के विरोधी उदाहरणों में अधिकांश प्रथम तथा चतुर्थ ही नियम के भंग करनेवाले प्राप्त होते हैं; और नियमों के तोड़नेवाले कवित्त बहुतही खोज करने से मिलें तो मिलें । इसका मुख्य कारण यह है

हरिकिस कहै सोई सही राजा जाके प्रजा धुर्व धरमध्वजा की छाँह सोवतीं ॥ ऐसे तो कहावतै हैं कोढ़ी राजा कोरी राजा घर घर राजा मानि मैया मुख जोवतीं । सुमिरि सुमिरि चमरैलिया कुरैलियाह्व सूए पैं खसम राजा राजा कहि रोवतीं ॥"

इसके तीसरे पाद में छः अक्षर के पश्चात् दस गुरु एकत्र पड़े हैं ॥

तेइस लघु ।

"लोल दृग लोलति अलक झलकति छबि छलकति श्रुतिमनिकिरन कपोल मैं । दीपति ललाट तें छूटति बिघटति पट नटत किसोर भृकुटीतटकलोल मैं ॥ आज ब्रजभूषन सों नवलकिसोरी होरी खेलति हँसति बिहँसति बर बोल मैं। रङ्गझार झेलति पछेलति अलीनि चलि मेलति गुलाल मिलि जाति पुनि गोल मैं ॥"

इसके प्रथम पाद में पांच अक्षरों के पश्चात् तेइस लघु एकत्र पड़े हैं ॥

प्रिय पाठकगण! जिस प्रकार से साहित्य के पढ़ने से कवि शुद्ध तथा लक्षणयुत काव्य बनाने को समर्थ हो जाता है, परन्तु उसके काव्य में विशेष रूप से रमणीयता तथा हृदयग्राह्यता का उत्पन्न होना, उसकी प्रतिभा पर निर्भर है; उसी प्रकार से इन नियमों को जानने और इन के अनुसार कवित्त बनाने से कवित्त की गति निर्दोष तथा खटकरहित तो अवश्य होगी, परन्तु उसमें विशेष लालित्य, लोच, रोचकता, तथा विषयानुकूलतादि गुणों का आना बनाने वाले के अनुभव, सुघरता, सहृदयता तथा अभ्यास और निपुणतादि पर निर्भर है। किस स्थान पर किस प्रकार का कौन शब्द किस प्रकार के किस शब्द की अपेक्षा अधिक योग्यता रखता है यह बात नियमों से कदापि नहीं जानी जा सकती। इसके निमित्त कवि को अपने हृदय में स्वयं विचार करके अनुभव करना चाहिये, और उन कवियों के कवित्त की गति

अपने चित्त में भली भाँति स्थापित करनी चाहिये जो कि कवित्त की चाल ढाल में अति निपुण थे; जैसे पद्माकर, पजनेस, तथा बुन्देलखण्डी किशोरादि॥



विज्ञापन।
